हिन्दुस्तानी संगीत के अमर गायक - उस्ताद अमीर खाँ

डॉ॰ प्रेरणा अरोड़ा

एसोसिएट प्रोफेसर, संगीत विभाग, जानकी देवी मेमोरियल कॉलेज, दिल्ली यूनिवर्सिटी, दिल्ली

सार-संक्षेप

हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत जगत में इंदौर घराने के प्रवर्तक उस्ताद अमीर खाँ साहब का स्थान अद्वितीय है। उन्होने संगीत जगत में एक ऐसा मुक़ाम हासिल किया है जो अपने आप में विलक्षण है। वे एक ऐसे कलाकार हैं जिनकी ख्याति उनके जाने के ४६ वर्ष बाद भी ज्यों की त्यों बनी हुई है।उन्होंने भारतीय संगीत को नयी दिशा की ओर अग्रसर किया है और उनकी शैली आज इंदौर गायकी के रूप में जग प्रचलित है। प्रस्तुत लेख में खान साहब के व्यक्तित्व, गायकी, पार्श्व गायन, सम्मान एवं उनकी बंदिशों का रोचक ढंग से निरूपण किया गया है तथा उनके गायन की विशेषता को उजागर करने का प्रयास किया गया है।

भारतीय शास्त्रीय संगीत पिपासुओं के हृदयों के लिए संगीतसुधा की वृष्टि करने वाली यह मधुरतम आवाज़ यद्यपि 3 फ़रवरी, 974 के दिन मृत्यु के क्रूर हाथों ने मौन कर दी परन्तु समय की क्या बिसात कि वह उनकी कला को भुला सके। इन्दौर घराने के प्रवर्तक उ॰ अमीर खाँ साहब का अमर संगीत आज भी यू-टयूब, ऑडियो कैसेट्स, सीडीज, रेडियो रिकॉर्डिंग, उनकी शिष्य परम्परा एवं संगीत रसिकों के हृदय में जिन्दा है। आज भी उनकी रिकॉर्डिंग को सुनकर संगीत विद्यार्थी ही नहीं अपितु संगीतज्ञ भी न केवल आनंद लेते हैं अपितु उनकी कुछ न कुछ छाप ले लेते हैं ।

उनका व्यक्तित्व ऐसा आकर्षण था कि जो भी उनके सम्पर्क में आता, प्रभावित हुए बिना नहीं रहता । छः फुट से भी लम्बा व गठा हुआ सुडौल शरीर, साफ़ रंग, विचार-मग्न गंभीर चेहरा व चिन्तनशील माथा, लम्बी नाक तथा चश्मा लगाए आँखें जो कि सदैव अपने भीतर किसी गहन सोच में निमग्न रहतीं, बरबस ही सामने वाले व्यक्ति को प्रभावित करते। कभी-कभी तो उनके माथे के बीचोंबीच आज्ञा चक्र के स्थान पर एक उभार चमकता दिखाई देता। सूफ़ियाना पहनावे में गाते समय वे ज़मीन पर सुखासन की मुद्रा में मेरुदंड सीधा रख कर बैठते और अपने दाएं हाथ की तर्जनी से कभी जाने अनजाने धरती माँ को स्पर्श किए रहते थे। संभवतः ऐसा करने के पीछे रहस्य था - भूमि से ऊर्जा प्राप्त करना। खाँ साहब के गायन का गाम्भीर्य उपज संवेदनशीलता, धैर्य व सौंधी सुगन्ध इसी पृथ्वी के ही गुण हैं और इस शरीर की निर्मिति और अंततोगत्वा विलयन भी तो मिट्टी ही में जो है। फिर चाहे मृत शारीर को अग्नि के द्वारा प्राप्त राख़ हो या फिर सुपुर्द - ए -खाक हो।

उ॰ अमीर खाँ का मन, विशेषतः गायन के समय, एक योगी की भाँति ही होता था। वे कई बार अपने गायन की शुरुआत में स्वर भरते समय आधार स्वर को आ' के स्थान पर ला' कह कर प्रारम्भ करते क्योंकि वे आरम्भ से ही अपना समग्र अस्तित्व उस अल्लाह के साथ जोड़ना चाहते थे। 'ला' शब्द उनके लिए अल्लाह का ही संक्षिप्त रूप था।

नाद ब्रह्म की उपासना हेतु उस्ताद अमीर खाँ के द्वारा गाया गया प्रत्येक स्वर-समूह पूजा के समय एक आह्वान की भाँति होता था जिसमें वे सराबोर रहते । उस्ताद अमीर खाँ साहब गायन के दौरान (एवं यहाँ तक कि उससे पूर्व भी) ध्यानमग्न ही रहते ।

गाते समय खाँ साहब स्वयं के भीतर उस परमात्म शक्ति को ही सम्बोधित करते थे। उनका गायन मात्र कला प्रदर्शन नहीं अपितु उस नूर की इबादत था । तभी तो उनके गायन से समूचा वातावरण इतना शांतिमय हो जाता कि श्रोताओं को भी अंतर्मुखी होने लिए मजबूर करता । किसी भी साधारण गायक के लिए वाहवाही की इच्छा का त्याग करन असंभव सा कार्य है। उस्ताद अमीर खाँ ऐसे कलाकार थे कि नज़रें ऊँची करके भी नहीं देखते थे कि किसी श्रोता की कैसी प्रतिक्रिया है ? उनका ध्यय केवल दिखाव से तारीफ़ बटोरना या फिर सांगीतिक उपलब्धियों से चकाचौंध कर देना बिल्कुल भी नहीं था।

उस्ताद अमीर खाँ की गायकी की यह विशेषता थी कि वह अन्तर्मुखी, विचारशील, धीर-गंभीर, बौद्धिक सूझबूझ एवं भावों से परिपूर्ण थी। शुद्ध मुद्रा से शांतिप्रद स्वरलगाव युक्त अति विलम्बित लय में स्पष्ट उच्चारण करते हुए गायन, स्थाई को दो बार गाना, अधिकांशत: झूमरा ताल का प्रयोग, आलाप में मंद्र एवं मध्य सप्तक पर विशेष जोर; बहलावे, कण, सूत, मींड, गमक व लहक आदि के प्रयोग एवं मेरुखदण्ड पद्धति से प्रेरित स्वर-योजना, सिलसिलेवार बढ़त, गायन के मध्य मौन का अनूठा प्रयोग, क्लिष्ट सरगम, बोलबाँट का प्रयोग बहुत कम, तबले से खिलवाड़ बिल्कुल नहीं, तीनों सप्तकों में वेगपूर्ण, गमकयुक्त व छूट की जटिल सुरीली व दानेदार तानों का प्रयोग उनके गायन को एक नया अन्दाज़ प्रदान करता था।

उस्ताद अमीर खाँ फ़ारसी शेर युक्त ख्यालनुमा तराने गाया करते थे। उनके अनुसार "तराना अमीर खुसरो ने अपने धर्मगुरु हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया के लिए बनाया। उसमें कुछ खास शब्द रखे जिनका पुनरुच्चारण किया जाता है। फ़ारसी के शेरों का कोई न कोई गूढ़ अर्थ होता है। 'य ल ल ल लोम' में 'या अल्ला अल्ला अल्ला' में जाप का भाव आता है जैसे कि अल्ला के नाम की गूंज-अनुगूंज सुनाई पड़ती हो।"

उस्ताद अमीर खाँ साहब की इस हर दिल अज़ीज़ अमीर गायकी पर मुख्यतया अपने पिता शाहमीर खाँ के साथ-साथ देवास के उस्ताद रज्जब अली खाँ साहब, भिंडी बाज़ार के उस्ताद अमान अली खाँ साहब और किराना घराने के उस्ताद अब्दुल वहीद खाँ साहब का प्रभाव रहा। उस्ताद अमीर खाँ ने नीर क्षीर विवेक का प्रयोग कर जहाँ से जो अच्छा गुण प्राप्त हुआ उसे अपनी रुचि, समझ, ग्राह्य शक्ति द्वारा संश्लेषित कर एक नवीन रसायन तैयार किया । तभी तो उनके गायन की सुवास पूरे ज़माने में फैल गई।

1967 में 'संगीत नाटक अकादमी' अवार्ड, 1997 में पद्मभूषण, *1957* में बिहार संगीत नाटक अकादमी की 'फैलोशिप', 1970 में फिल्मूस डिवीज़न द्वारा, वृत्तचित्र तथा 1977 में 'सुरसिंगार संसद' द्वारा 'स्वर विलास' की उपाधि से विभूषित किया गया। उस्ताद अमीर खाँ ने 1964 में ईस्ट वेस्ट कांफ्रेंस' में भारतीय संगीत का प्रतिनिधित्व किया । इसी कांफ्रेंस में दुनिया के महानतम कलाकारों में से एक सुप्रसिद्ध वायलिन वादक यहूदी मैनुइन भी यहां शामिल थे। उन्होंने एक मंत्री जी के निवास पर आयोजित की गयी सांगीतिक-बैठक में उस्ताद अमीर खाँ साहब का गायन सुना। और जब वे स्वदेश लौटे तो खाँ साहब को यादगार के रूप में अपनी एक फोटो भेजी जिसके पीछे उन्होंने लिखा था – "ಫ಼ುಟಜ ಖ ತಿಫಿ ಟುಣಜಟುಟಠ ಣಠ ಧಿಠಣ, ಖ ತಿಫಿ ಣಡಿಜಟಿಛಿಠಠಡಿಣಜಜ ಣಠ ಣುಜ, ಜತಜಟಿಣು ಀಜಚಿತಜಟ."

एक बार खाँ साहब ने कहा : "मैंने ताउम्र खुद का नया-रास्ता बनाने और ख्याल गायकी को इसकी मंजिल अर्थात इबादत तक पहुँचाने की कोशिश की है।' जैसा कि हम जानते हैं कि मध्यकाल तक आते-आते हमारा संगीत अपनी गरिमा से च्युत हो रहा था। शास्त्रीय गायकों को रजवाड़ों का संरक्षण प्राप्त होने के कारण उनका ध्येय केवल राजाओं की प्रशंसा करना या फिर शृंगारिक गायन मात्र हो चला था। उस्ताद अमीर खाँ ने गायन के आध्यात्मिक पक्ष को उजागर किया। भारतीय संस्कृति में संगीत का मुख्य उद्देश्य ही आध्यात्मिकता का संचार कर परमात्म-प्राप्ति माना गया है। उस्ताद अमीर खाँ की सोच धार्मिक संकीर्णताओं से बहुत ऊपर थी। एक मुस्लिम परिवार में पैदा होने के बावजूद उन्होंने यही माना कि कृष्ण और करीम, राम और रहीम, हरि और अल्लाह एक ही हैं। वे भगवान् के विभिन्न नामों का प्रयोग उसी श्रद्धाभाव से

अपनी बंदिशों में भी किया करते थे। यह उनकी हृदय की विशालता का है। ऐसे ही एक उदाहरण के लिए, राग आभोगी की बंदिश देखिए जो एकताल में निबद्ध है -

स्थाई : लाज रख लीजो मोरी
तू साहेब सत्तार निराकार
जग के दातार
अंतरा : तू रहीम राम तू ही
तेरी माया अपरम्पार,
मोहे तेहारे करम को आधार
जग के दातार।

इसी प्रकार राग शुद्ध कल्याण में झूमरा ताल में निबद्ध रचना देखिए -

स्थाई करम करो कृपाल दयाल
तुम हो सब जग के दाता (रे)
अंतरा करीम रहीम करता दुख भंजन
भव सागर सों तार विधाता।

अन्य कई रागों में भी उन्होंने भक्तिपरक रचनाएं गाई हैं, उदाहरण के लिए राग 'अहीर-भैरव' में 'पिया परवीन परम सुख, चतुर ' तथा राग मालकौंस में 'जिनके मन राम विराजे'। खां साहब श्रृंगारिक रचनाएं भी रचते एवं गांते थे परन्तु वे सब मर्यादा की सीमाओं में सिमटी थीं, उदाहरणार्थ राग जनसम्मोहिनी में 'कौन जतन सों पिया को मनाऊँ' तथा राग नंद की बंदिश - 'मन बेर बेर चाहत है, तुम्हरे दरस देखन को ।' खाँ साहब ने श्रृंगार रस का प्रयोग अधिकांश रूप से वियोग श्रृंगार के रूप में ही किया है। उनके काब्य में ऐसा प्रतीत होता है जैसे कोई मिलन को आतुर है। अमीर खाँ साहब के प्रियतम (एक सूफ़ी की भाँति) ईश्वर थे – ऐसा ईश्वरीय प्रेम 'इश्क-ए-हक़ीक़ी' है। अत: इस प्रकार की बंदिशें भी एक भक्त द्वारा अपने इष्ट-प्रभु के प्रति समर्पण हैं।

संगीत के विषयक विचार व्यक्त करते हुए एक बार खाँ साहब ने फ़रमाया - "हमारा संगीत सूरदास और खुसरो की परम्परा का संगीत है, इसमें किसी प्रकार की उच्छुंखलता के लिए कोई स्थान नहीं है। ख्याल गायकी में भक्तिभाव ही सबसे ज़रूरी है।"

अमीर खाँ साहब ऐसे विरले गायक थे जिन्होंने अपने से पहले समय के उस्तादों के विपरीत शास्त्रीय संगीत के प्रति कट्टरता का रवैया भी नहीं रखा अपितु उसका अधिक प्रचार करने के लिए फ़िल्मों की मदद लेने से भी नहीं हिचकिचाए तथा अपने गायन का स्तर हल्का नहीं पड़ने दिया। संगीत के शास्त्रीय पक्ष को अक्षुण रखते हुए पार्श्वसंगीत गायन के द्वारा उन्होंने अपना संगीत जन साधारण तक पहुंचाया और शास्त्रीय संगीत को लोकप्रिय बनाने के इस माध्यम का भी लाभ उठाया। यह उनका बहुत बड़ा योगदान है।

उदाहरणार्थ सन् 1952 की 'बैजू बावरा' फ़िल्म में पूरियाधनाश्री राग को 'टाइटल साँग', के रूप में एकताल में गाया - 'तोरी जय जय करतार'। बांगला फ़िल्म क्षुधित पाषाण' में ठुमरी गाई - 'कैसे कटे अब रजनी सजनी।' 1954 की फ़िल्म 'शबाब' में राग मुल्तानी में भक्ति रचना "दया करो हे गिरिधर गोपाल', 1955 में 'येरे माझया मागल्या' नामक मराठी फ़िल्म में राग ललित की तीन ताल में निबद्ध बंदिश 'जोगिया मेरे घर आए' तथा 1955 में ही फ़िल्म 'झनक झनक पायल बाजे' में राग अडाना में निबद्ध रचना 'झनक झनक पायल बाजे', सन् 1959 में निर्मित फ़िल्म 'गूंज उठी शहनाई' में कई रागों यथा मुल्तानी, यमन कल्याण, सूरमल्हार, बागेश्री तथा चंद्रकोंस की लड़ी सी, जो कि रागमाला प्रतीत होती है, गाई। इसी प्रकार

फ़िल्म 'जय श्री कृष्ण' में राग दरबारी की बंदिश 'ए मोरी आली' तथा 'मिर्ज़ा गालिब' नामक वृत्तचित्र में उन्होंने गालिब की सुप्रसिद्ध गज़ल 'रहिए अब ऐसी जगह चल कर, जहाँ कोई न हो' भी गाई। इस प्रकार हम देखतें हैं की खाँ साहब बहुमुखी प्रतिभा संपन्न थे। वे न केवल ख़्याल ही अपितु ठुमरी गाने में भी सिध्हस्त थे। वे मंच पर ऐसा नहीं करते थे क्योंकि उनकी रूचि इन शैलियों में नहीं थी। उन्होंने विशुद्ध ख़्याल गायकी की सेवा में अपना जीवन समर्पित कर दिया।

खाँ साहब के प्रमुख शिष्यों में स्वर्गीय अमरनाथ, स्वर्गीय ए॰टी॰ कानन, सिंह बंधु (तेजपाल सिंह और सुरिन्दर सिंह), स्वर्गीय श्रीकांत बाकरे, स्वर्गीय मुकुंद गोस्वामी, मुनीर खाँ, पूर्वी मुखर्जी, स्वर्गीय प्रद्युम्न मुखर्जी और कंकना बनर्जी आदि हैं।

एक गुरु के रूप में उस्ताद अमीर खाँ साहब चन्दन वृक्ष की भांति थे। जिस प्रकार चन्दन के वृक्ष के समीपवर्ती सभी पेड़ों में स्वतः ही चंदन की सुगंध आने लगती है, ठीक उसी प्रकार उस्ताद अमीर खाँ के गायन से केवल उनके शिष्य या प्रशंसक मात्र ही नहीं अपितु समूचे संगीत जगत के सभी प्रेमी लाभान्वित हुए हैं, भले ही वे किसी अन्य घराने से ही सम्बन्ध क्योंना रखते हों वे इंदौर गायकी से प्रभावित होते रहे हैं और आने वाले समयों में भी होते रहेंगे इसमें कोई संशय नहीं।

शताब्दियों में एक-आध ही ऐसा कलाकार पैदा होता है जिनका कि असर उनके हर समकालीन कलाकार पर पड़ता है। पं जसराज का कहना था - "उस्ताद अमीर खाँ ने ऐसा कुछ कर दिखाया कि आज भी लोग उनको गाते हैं और बजाते हैं भले ही वे किसी भी घराने से हों। मैं भी उनके गाने से बहुत प्रभावित हूँ, अछूता नहीं हूँ । " उस्ताद अमीर खाँ के विषय में दिग्गज गायक पं॰ भीमसेन जोशी जी ने कहा था - "अपने गुरुजनों के अलावा मैं दो कलाकारों से प्रभावित हुआ हूँ, जिन्होंने मेरे मन को छुआ है - एक श्रीमती केसरबाई केरकर और दूसरे उस्ताद अमीर खाँ। मैं उस्ताद अमीर खाँ का भक्त हूँ।" जब इस प्रकार के उद्गार आज के चोटी के कलाकार व्यक्त करते हैं, तो विदुषी प्रभा अत्रे का यह कहना भी युक्तिसंगत है - "अमीर खाँ साहब जैसे गायक भविष्य का अंदाज़ा लेते हुए कला को आकार देते रहते हैं। अपने बाद की ही नहीं, उसके बाद की पीढ़ियों का मार्गदर्शन करते रहते हैं। उनकी कला समय का बंधन नहीं मानती।" इन्ही सब कारणों से उस्ताद अमीर खाँ शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में अपने नाम को सार्थक करते हैं।